Digitized by eGangotri

श्रीगौरांगजावनी

H24.8
723 Shi
1027.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

श्रीगौरांगजीवनी

Rajeev

श्रीगौरचरण गोस्वामी ।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

Shri Gurang Jivani
by
Guswami

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

Shri Gaurang Jivan

श्रीगौरांगजीवनी

Goswami

लेखक

श्रीगौरचरण गोस्वामी

SPS
294.5 G 32 SH
1027

प्रकाशक

इंडियन प्रेस, लिमिटेड, प्रयाग।

१६२१

द्वितीय बार] [मूल्य ≡)

Sri Pratap Singh
Public Library
Srinagar.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

Printed and published by Apurva. Krishna Bose,
at the Indian Press, Ltd., Allahabad.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

भूमिका

श्रीगौराङ्गदेव का एक छोटा सा—बहुत ही छोटा सा—यह चरित है। बँगला, अँगरेज़ी, उर्दू, गुजराती, संस्कृत आदि भाषाओं में उनके अनेकों बड़े बड़े चरित प्रकाशित हो चुके हैं, हिन्दी में उनके एक चरित की आवश्यकता है। वह इस छोटी सी पुस्तक से पूर्ण होगी, यह आशा नहीं। किन्तु श्रीगौराङ्ग से परिचय करा देना ही इस पुस्तक का उद्देश्य है। जिन लोगों को श्रीगौराङ्ग के बड़े चरित-ग्रन्थों के पढ़ने की इच्छा हो, जो श्रीगौराङ्ग के अमृतमय पवित्र चरितों को विस्तार-पूर्वक पढ़ना चाहते हों उनको अँगरेज़ी की "Lord Gaurang (अमृतबाज़ार पत्रिका के सम्पादक शिशिरकुमार घोष-कृत) और "Chaitanya" (यदुनाथ सरकार, एम० ए० कृत) ग्रन्थ पढ़ने चाहिए। उनको पढ़ कर उन्हें जो आनन्द प्राप्त होगा, वह इस पुस्तक में मिलना कठिन है। एक मित्र के अनुरोध से श्रीगौराङ्ग की कुछ शिक्षायें साथ में लिख दी गई हैं।

श्रीगौराब्द ४२८

श्रीगौरचरण गोस्वामी
श्रीवृन्दावन

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

श्रीगौरोपदेश-सार ।

भारतभूमि में जिन मनुष्यों का जन्म हुआ है, उनको परोपकार कर अपने जीवन को सफल करना चाहिए ।

दूसरे धर्म्म के देवता और धर्म्म-ग्रन्थों की निन्दा नहीं करनी चाहिए ।

तिनके से भी अधिक नम्र होकर, वृक्षों से भी अधिक सहनशील होकर, अमानी होकर दूसरों को मान देनेवाले मनुष्य को श्रीकृष्ण-भजन करना चाहिए ।

किसी को भी काय-मनोवाक्य से, किसी के चित्त में उद्वेग उत्पन्न नहीं करना चाहिए ।

श्रीकृष्ण की कृपा, वेद के परतन्त्र नहीं है । ईश्वर जातिकुलादि का विचार नहीं रखता ।

आत्महत्या करने से भगवत्प्राप्ति नहीं हो सकती॥

जो मनुष्य विषयबासना में लिप्त हैं, उनको ईश्वर मिलना असम्भव है ।

॥ पुरी में पूर्व्व-समय में बहुत से मनुष्य रथ के नीचे पड़ कर, इस आशा से प्राणत्याग करते थे कि उनको भगवत्प्राप्ति हो जायगी, श्रीगौराङ्ग ने यह उपदेश उन पर लक्ष्य करके किया है ।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

भगवद्भक्त श्वपच उस चतुर्वेदी ब्राह्मण से अच्छा है, जो ईश्वर पर विश्वास नहीं करता।

वेद प्रमाण-शिरोमणि है, किन्तु यदि उसमें लक्षणा की जाय, तो वह स्वत:प्रमाण नहीं कहा जा सकता।

भगवान् के नाम को एक बार लेने से ही सब पाप दूर हो जाते हैं, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं।

जो मनुष्य इस भरोसे पर पाप करता है कि मैं भगवान् का नाम लेकर पाप को दूर कर दूँगा उसका पाप घटता नहीं, किन्तु बढ़ता है।

संन्यासी होकर जो स्त्री से सम्भाषण करता है, उसका मैं मुख नहीं देख सकता।

मनुष्य को कभी परापेक्षा नहीं करनी चाहिए।

मनुष्य का मुख्यत: यही धर्म्म है (१) भगवान् का नाम लेना, (२) जीवों पर दया करना, (३) भगवद्भक्तों की सेवा करना।

जो भगवद्भक्त है, जाति में कोई भी क्यों न हो, उसके स्पर्श में कुछ भी दोष नहीं।

प्रत्येक जीव का सम्मान करना, सबका कर्त्तव्य है।

भगवान् नीचों पर अधिक कृपा करते हैं, क्योंकि पण्डित, कुलीन, ब्राह्मण आदि को बड़ा अभिमान होता है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

भगवद्भक्ति के सब अधिकारी हैं, उनमें जाति-कुलादि का विचार नहीं करना चाहिए।

भक्तों को ईश्वर से, धन, जन, सुन्दर कविता आदि की इच्छा नहीं करनी चाहिए, उनको उससे केवल अहैतुकी-भक्ति के लिए ही प्रार्थना करनी चाहिए।

धनवान् लक्षपति नहीं हो सकता, लक्षपति वही है, जो भगवान् के नित्य एक लाख नाम को जपता है।

बहुत से देवी देवताओं की पूजा से फल नहीं हो सकता, केवल भगवान् की पूजा ही श्रेयस्कर है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

श्रीगौरांगजीवनी ।

प्रथम परिच्छेद

बंगाल में "सिलहट" नाम का एक नगर है। वहाँ पर एक वैदिक ब्राह्मण निवास करते थे, जिनका नाम उपेन्द्र मिश्र था। उपेन्द्र मिश्र के सात पुत्र हुए थे, जिनमें से जगन्नाथ भी एक थे। जगन्नाथ नवद्वीप (नदिया) में आकर शास्त्राभ्यास करते थे और वहाँ ही उन्होंने शची देवी से विवाह किया था। वे वहाँ के प्रसिद्ध पण्डित नीलाम्बर चक्रवर्त्ती की कन्या थीं। जगन्नाथ मिश्र के ८ कन्यायें हुईं, किन्तु उनमें से एक भी जीती न रही। उनके बाद दो पुत्र हुए, जिनके नाम विश्वरूप और विश्वम्भर थे। विश्वरूप आरम्भ से ही धर्म्म की ओर रुचि रखते थे। नवद्वीप में अद्वैताचार्य्य ने एक विद्यालय स्थापित किया था, जिसमें वे धर्म्म-शिक्षा देते थे। विश्वरूप आरम्भ में उसी विद्यालय में संस्कृत के साथ ही साथ धर्म्म-शिक्षा पाते थे और बहुत थोड़े समय में ही वे एक अच्छे विद्वान् हो गये। उसी समय जगन्नाथ मिश्र ने चाहा कि विश्वरूप का विवाह हो जाय। जब विश्वरूप को यह ज्ञात हुआ तो उन्होंने घर छोड़ दिया, और भारत के अनेक प्रान्तों में भ्रमण किया। विश्वरूप

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

ने संन्यास ग्रहण कर लिया था, और उनका नाम "श्रीशङ्करारण्य" हुआ। थोड़े दिनों बाद ही, "दक्षिण" में उन्होंने विश्राम किया, और आजीवन वहाँ ही निवास करते रहे। जगन्नाथ मिश्र ने उनकी खोज के लिए स्थान स्थान पर मनुष्य भेजे, किन्तु उनको कुछ भी संवाद ज्ञात नहीं हो सका। इसलिए शची देवी और श्रीजगन्नाथ को बहुत दुःख रहता था, और उनकी सब आशायें विश्वम्भर पर थीं, जिनका दूसरा नाम "श्रीगौराङ्ग" था।

श्रीगौराङ्ग का जन्म, संवत् १५४२ (सन् १४८५) में फाल्गुन की पूर्णमासी को हुआ। उस दिन चन्द्र-ग्रहण था, अतः दूर दूर से बहुत से मनुष्य गंगा-स्नान करने को आये थे। उन लोगों के मुख से निकली हुई हरिध्वनि से नवद्वीप प्रतिध्वनित हो रहा था। श्रीगौराङ्ग का—श्रीहरिनामप्रचारक विश्वम्भर का—उसी समय जन्म हुआ। विश्वम्भर का रूप-रङ्ग दूसरे शिशुओं की तरह नहीं था। बालक के मनोहर रूप को देख कर, माता पिता को जो आनन्द हुआ था, उसके बताने की आवश्यकता नहीं है। विश्वम्भर, अपनी बाल्यलीलाओं से सबका आनन्दवर्द्धन करने लगे। जब वे रुदन करते थे, तो अनेक चेष्टाओं से भी उनका रोना बन्द नहीं होता था। "हरि-ध्वनि" ही उनके रुदन बन्द करने की, अव्यर्थ औषधि थी। भगवान् का नाम लेते ही शिशु चुप हो जाता था। इसके लिए प्रतिवासिनियों ने उनका नाम "गौर-हरि" रख लिया था। विश्वम्भर की माता ने उनका नाम "निमाई" रक्खा था।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

श्रीगौराङ्ग, जब पाँच वर्ष के हुए, तब जगन्नाथ मिश्र ने उनको एक पाठशाला में बैठाया । वहाँ उन्होंने थोड़े समय में ही वङ्ग भाषा की शिक्षा को समाप्त किया । उसके उपरान्त वे संस्कृत पढ़ने के लिए गंगादास की "चतुष्पाठी" में बैठाये गये । वहाँ उन्होंने "व्याकरण" को बहुत अच्छी तरह से पढ़ा । श्रीगौराङ्ग तीव्रबुद्धि थे, और थोड़े दिनों में ही वे नवद्वीप के विद्यार्थियों में प्रथम गिने जाने लगे । इसी समय जगन्नाथ मिश्र की मृत्यु हुई, जिससे शची देवी को और श्रीगौराङ्ग को बड़ा दुःख हुआ । उस समय नदिया के पास, एक पण्डित ने विद्यानगर में एक दर्शनों की पाठशाला स्थापित की, जिनका नाम वासुदेव सार्वभौम था । श्रीगौराङ्ग ने उस विद्यालय में बहुत दिनों तक शिक्षा ग्रहण की ।

जब श्रीगौराङ्ग युवा हुए, तब उनका विवाह नदिया के वल्लभाचार्य्य नाम के ब्राह्मण की "लक्ष्मी" नामक कन्या से हुआ ।

श्रीगौराङ्ग अपनी पढ़ाई को पूर्ण कर चुके थे, और उनकी प्रसिद्धि "पण्डित" नाम से हो चुकी थी । वे एक पण्डित ही नहीं; किन्तु एक अच्छे विद्वान्, जैसे कि उस समय नवद्वीप में दूसरे नहीं थे, हो गये । श्रीगौराङ्ग ने उसी समय एक विद्यालय स्थापित किया, जिसमें वे विद्यार्थियों को संस्कृत की शिक्षा देते थे । उस समय उनकी अवस्था १६ वर्ष की थी, उनका यज्ञोपवीत हो चुका था । जब उनकी अवस्था ६, १० वर्ष की थी, तब उन्होंने व्याकरण की एक टिप्पणी बनाई थी । उनके गुरु ने प्रसन्न होकर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

उनको " विद्या-सागर " उपाधि प्रदान की, इसलिए उनकी टीका का नाम "विद्या-सागरी टीका" हुआ। उनकी इस टीका का नवद्वीप के विद्वज्जन-समाज में बड़ा आदर हुआ, और पूर्ववङ्ग में भी बहुत प्रचार हुआ।

श्रीगौराङ्ग ने व्याकरण पढ़ कर न्याय पढ़ा था। न्यायपाठार्थी विद्यार्थियों में "दीधिति" के ग्रन्थकार मिथिला के गर्व्व-खर्व्वकारी रघुनाथ उस समय सर्व-प्रधान थे। बालक श्रीगौराङ्ग की सर्व्वतो-मुखी प्रतिभा से उनको भी मलिन होना पड़ा। रघुनाथ बहुत गवेषणा से जिस तर्क की मीमांसा करते थे, श्रीगौराङ्ग सुनते ही उसका समाधान कर देते थे। एक दिन रघुनाथ किसी जटिल तर्क की मीमांसा के लिए, एक गूलर-वृक्ष के नीचे चिन्तामग्न बैठे थे। वे चिन्ता में इतने तन्मय हो गये थे कि पक्षियों के उनके ऊपर मल-त्याग करने पर भी उनकी चिन्ता नहीं टूटी। अन्त में जब दो एक दिन माथा मारने पर भी कुछ फल नहीं निकला, तब उनको श्रीगौराङ्ग से पूछना पड़ा। श्रीगौराङ्ग ने उसी समय समाधान कर दिया।

उस समय श्रीगौराङ्ग ने न्यायशास्त्र में व्युत्पन्न होकर एक "न्याय" पर ग्रन्थ लिखा था। न्यायदर्शन में "नवद्वीप" भारत-वर्ष में अद्वितीय था। श्रीगौराङ्ग ने उसी विषय पर एक प्राञ्जल ग्रन्थ लिखा था, किन्तु उनकी उदारता से वह ग्रन्थरत्न नष्ट हो गया, वे एक दिन उस ग्रन्थ को लेकर गङ्गा पार जा रहे थे। जिस नौका पर वे थे, उसी पर रघुनाथ भी थे। वे भी न्याय पर अपना प्रसिद्ध

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

"दीधिति" ग्रन्थ लिख रहे थे। रघुनाथ को ज्ञात हुआ कि श्रीगौराङ्ग ने भी एक न्याय-विषयक ग्रन्थ लिखा है, और जब उन्होंने उस ग्रन्थ को देखा तो उनको बहुत ही दुःख हुआ। उनको श्रीगौराङ्ग के ग्रन्थ को देख कर विश्वास हुआ कि मैं जो ग्रन्थ लिख रहा हूँ, श्रीगौराङ्ग-रचित ग्रन्थ के सामने उसका कुछ भी आदर नहीं होगा। उदारचरित श्रीगौराङ्ग को जब ज्ञात हुआ कि रघुनाथ को उनके ग्रन्थ को देख कर भय हुआ है तो उन्होंने उसी समय अपने ग्रन्थ को गङ्गा में प्रवाहित कर दिया और उसी दिन से न्याय की चर्चा भी छोड़ दी।

हम ऊपर लिख चुके हैं कि श्रीगौराङ्ग ने एक विद्यालय भी स्थापित किया। विद्यालय मुकुन्दसञ्जय नामक एक धनाढ्य ब्राह्मण के सुबृहत् चण्डीमण्डप में स्थापित था। श्रीगौराङ्ग के पाण्डित्य और उनकी प्रतिभा की प्रशंसा होने लगी। अनेक छात्रों ने उनके विद्यालय में आश्रय लिया। उनके विद्यालय की दिन दिन उन्नति होने लगी। उन्हीं दिनों नदिया में "केशव काश्मीरी" नाम के एक दिग्विजयी का आगमन हुआ। केशव भारतवर्ष के प्रसिद्ध नगरों के पण्डितों को जय कर, नवद्वीप के पण्डितों को विजय करने के लिए आये थे। नवद्वीप के पण्डितों में उनके आगमन के कारण बड़ी खलबली मच गई, क्योंकि उनसे शास्त्रार्थ करने का किसी को साहस नहीं हुआ। श्रीगौराङ्ग एक दिन गङ्गा के तट पर बैठे हुए थे, उनके बहुत से छात्र भी उस समय थे। इतने ही में केशव भी वहाँ आ पहुँचे।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

श्रीगौराङ्ग ने बातही बात में उनको पराजित कर दिया। केशव अपने साथ के पण्डितों और धन को छोड़ कर नवद्वीप से चले गये। श्रीगौराङ्ग की इससे बहुत ख्याति हुई। श्रीगौराङ्ग ने केशव से विवाद में जिस कोमलता से व्यवहार किया था, उससे केशव को हार जाने पर भी कुछ दुःख नहीं हुआ।

पद के गौरव से अध्यापक श्रेष्ठ होने पर भी श्रीगौराङ्ग की अवस्था बहुत नवीन थी। इसलिए तरुण वयस में प्रवीणोचित शिक्षा और ज्ञान प्राप्त होने पर भी उनमें बालक के समान ही सरलता थी। शैशव की चञ्चलता, यद्यपि उनमें उस समय भी विद्यमान थी, किन्तु यौवन में जहाँ चापल्य होता है, वहाँ वे परम संयत थे। जैसा श्रीचैतन्य-भागवत में लिखा है कि "वे सबके साथ चापल्य करते थे, किन्तु किसी स्त्री को आँख उठा कर भी नहीं देखते थे। किसी से परिहास करना तो दूर की बात है।" अब तक श्रीगौराङ्ग-देव का भक्ति की ओर ध्यान नहीं गया था। उन्हीं दिनों नवद्वीप में मध्य-संन्यासी माधवेन्द्र के शिष्य ईश्वरपुरी का आगमन हुआ। ईश्वरपुरी बड़े भगवद्भक्त थे। श्रीगौराङ्ग एक दिन चले जा रहे थे, उसी समय मार्ग में उनको ईश्वरपुरी मिले। श्रीईश्वरपुरी का श्रीगौराङ्ग से परिचय-आलाप हुआ। श्रीगौराङ्ग उनके घर नित्य जाने लगे। ईश्वरपुरी ने संस्कृत में "श्रीकृष्णलीलामृत" नाम का एक ग्रन्थ लिखा था। श्रीगौराङ्ग को उन्होंने वह ग्रन्थ पढ़ने को दिया। श्रीगौराङ्ग तब से ही श्रीकृष्ण-भक्त हुए, किन्तु उनका भाव धीरे धीरे बढ़ने लगा।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

ईश्वरपुरी वहाँ से शीघ्र ही चले गये। श्रीगौराङ्ग भी पूर्ववङ्ग की यात्रा करने को घर से निकले। थोड़े दिनों में वे जब लौट कर नवद्वीप आये, तब उनको ज्ञात हुआ कि उनकी स्त्री "लक्ष्मीदेवी" की मृत्यु हो गई है।

श्रीगौराङ्ग का विद्यालय, जो बराबर चल रहा था, उनके पूर्व-वङ्ग चले जाने से बन्द हो गया। जब श्रीगौराङ्ग यात्रा से लौटे, तब उन्होंने विद्यालय को फिर खोला। उन्हीं दिनों श्रीगौराङ्ग का विवाह "श्रीविष्णु-प्रिया" से हुआ।

विवाह के पीछे प्रायः दो वर्ष तक श्रीगौराङ्ग नवद्वीप में रह कर विद्या-दान करते रहे। उसी समय जब कि उनकी अवस्था २१ वर्ष की हो चुकी थी, एक दिन उन्होंने पितृ-ऋण-परिशोधार्थ गया जाने के लिए शची से आज्ञा माँगी। माता ने उनको आज्ञा दी और साथ में उनके कई शिष्यों को कर दिया। उनके साथियों ने देखा कि गया में पहुँचते ही श्रीगौराङ्ग का चाञ्चल्य, द्रुतगमन, स्वाभाविक कौतुकप्रवृत्ति अब बिल्कुल नहीं है। साथियों को बड़ा आश्चर्य्य हुआ। किन्तु साथही श्रीगौराङ्ग का भगवत्प्रेम बहुत ही बढ़ गया। जिसके कारण वे बहुत ही अस्थिर हो गये। श्रीगौरांग के इस अद्भुत परिवर्त्तन से सबको बड़ा ही आश्चर्य्य और भय हुआ।

गया में श्रीगौरांग को पूर्व्वपरिचित ईश्वरपुरी मिले। उन्होंने उनसे श्रीकृष्ण-मन्त्र ग्रहण किया। श्रीगौरांग गया में विष्णु-पद दर्शन करने के लिए गये। विरञ्चि-वाञ्छित, अजभवपूजित,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

योगिजन-दुर्लभ श्रीविष्णुपद के दर्शन करते करते श्रीगौरांग-प्रेम में अस्थिर होकर मूच्छित हो गये। साथियों ने उनको बहुत यत्न से सचेत किया। श्रीगौरांग के नेत्रों से उस समय आँसुओं की धारा बह रही थी, पागलों की सी अवस्था हो रही थी। श्रीगौरांग "कृष्ण! कृष्ण!" कहते हुए रुदन करने लगे। साथियों से उन्होंने कह दिया कि "मैं अब घर नहीं जाता, अपने प्राणेश्वर को खोजने के लिए मथुरा जाऊँगा। तुम सब जाओ।" उनके साथी श्रीगौरांग की प्रेमावस्था को देख कर बड़े भयभीत हो रहे थे, उन्होंने जैसे तैसे बहुत समझा बुझा कर श्रीगौरांग को नवद्वीप चलने को राज़ी किया।

द्वितीय परिच्छेद

श्रीगौरांग जब गया से नवद्वीप आये, तो सबने देखा कि उद्धत-शिरोमणि श्रीगौरांग की दशा अब पहली जैसी नहीं है। शिशु जैसा सरलभाव और चाञ्चल्य, चञ्चलगमन, उद्दाम वाक्पटुता सबही बदल गई है। उस समय उनकी अवस्था को देख कर नवद्वीप-निवासियों को बड़ा आश्चर्य्य हुआ। जब श्रीगौराङ्ग, श्रीकृष्णनाम लेते थे, उसी समय उनके नयनों से आँसुओं की धार बहने लगती थी। जब शुक्लाम्बर ब्रह्मचारी के घर गदाधर, सदाशिव आदि श्रीगौराङ्ग प्रभु के बन्धु-बान्धवों ने आकर उनसे गया का हाल पूछा, तब बहुत चेष्टा करने पर भी, श्रीगौराङ्ग के मुख से वहाँ की कोई बात न निकली। कहने की चेष्टा करते

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

ही उनके नेत्रों से अश्रु बहिर्गत होने लगे, और वे भगवत्प्रेम में मूर्च्छित हो गये । उसी दिन रात्रि को, जब विष्णुप्रिया देवी ने देखा कि उनके पति श्रीगौराङ्ग केवल रुदन ही कर रहे हैं, तो शची देवी से कहा । श्रीशची देवी ने आकर देखा । उनके आते ही श्रीगौराङ्ग और भी प्रेमोन्मत्त होकर कहने लगे,—माँ ! मैं अपनी आँखों के सामने एक सुन्दर ज्योतिर्म्मय मूर्ति को देख कर अश्रु नहीं रोक सकता ।" यह कह कर वे श्रीकृष्ण का रूप वर्णन करने लगे । वह रात्रि केवल पागलों की तरह, श्रीकृष्णकथा कहने में ही व्यतीत हुई ।

एक दिन, जब उनका प्रेमोन्माद कुछ कम हुआ, तब उनके छात्र उनसे पढ़ने के लिए आये । श्रीगौराङ्ग ने उनसे कहा—"भाई ! मुझको छोड़ दो, मैं श्रीकृष्ण-प्रेम में पागल होगया हूँ । मैं तुमसे अनुरोध करता हूँ कि तुम्हारी जहाँ इच्छा हो, वहाँ जाकर पढ़ो !" किन्तु उनके छात्रों ने किसी तरह से न माना । श्रीगौराङ्ग भी उनको पढ़ाने लगे । किन्तु वे जो कुछ कहते थे, सब भगवद्विषयक; पढ़ने लिखने की बात एक भी उनके मुख से नहीं निकलती थी । उनके छात्र भी धीरे धीरे भगवद्भक्त होने लगे । श्रीगौराङ्ग उनको साथ में लेकर अपूर्व नाम-सङ्कीर्त्तन करने लगे । श्रीगौरांग गाने लगे—

"हरिहरये नमः, कृष्णयादवाय नमः ।
यादवाय माधवाय केशवाय नमः ।
गोपाल गोविन्द राम श्रीमधुसूदन ॥"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

श्रीगौराङ्ग के साथ ही साथ उनके असंख्य भक्त शिष्य गाते थे और नाचते थे। उस समय श्रीगौराङ्ग की जो अवस्था हो गई थी, वह अकथनीय है। श्रीगौराङ्ग गाते गाते धूल में लोटने लगते थे, कभी प्रेम में मूर्च्छित हो जाते थे। अश्रु-धारा तो उनके नेत्रों से बराबर जारी रहती थी।

उस समय नवद्वीप में एक बड़ा आकर्षण आरम्भ हुआ। भक्त, पाषण्ड, सब श्रीगौरांगदेव का कीर्त्तन सुनने के लिए आने लगे। श्रीवास, एक आदर्शभक्त थे; श्रीगौराङ्ग उनके घर ही कीर्त्तन करते थे। जब सुना ही नहीं, किन्तु देखा कि पण्डित-शिरोमणि अब कोई दूसरे ही हो गये हैं, उन्होंने विद्या-चर्चा छोड़ कर भगवच्चर्चा आरम्भ कर दी है, तब नवद्वीप के पण्डितों में बड़ी खलबली मची।

श्रीअद्वैताचार्य्य, परम-भक्त थे। उनका नाम एक बार पहले लिया जा चुका है। वे श्रीगौरांग के सहयोगी होकर, श्रीहरिनाम-सङ्कीर्तन करने लगे।

नवद्वीप-निवासी बहुत से भक्त वृन्द, श्रीवास के घर आकर श्रीगौराङ्गदेव के साथ श्रीहरिनाम-सङ्कीर्त्तन करते थे। प्रतिदिन निताई, अद्वैताचार्य्य, गदाधर, श्रीवास, मुरारि मुकुन्द, नरहरि, पुरुषोत्तम, पुण्डरीक, विद्यानिधि, गङ्गादास, दामोदर, गोविन्द, वासु-घोष, वक्रेश्वर, चन्द्रशेखर आदि सैकड़ों भक्त आकर श्रीकृष्ण-सङ्कीर्त्तन करते थे। वे जब मिल कर, प्रेम में मत्त होकर श्रीवास के घर में, नाम-कीर्त्तन में रत होते थे तब नवद्वीप के बहुत से मन्द-स्वभाव-

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

शाली असूयापरायण व्यक्ति बाहर से तरह तरह के अत्याचार और चीत्कार कर उनके तप में विघ्न डालने की चेष्टा करते थे। किन्तु उन अन्त:सार-शून्य व्यक्तियों के वृथा आडम्बर से श्रीगौराङ्ग की मण्डली में कुछ बाधा नहीं पहुँची; किन्तु उत्तरोत्तर वह पुष्ट होने लगी। उनके विरोधियों का दल, इसलिए और भी उत्तेजित होने लगा।

दो भाई, जिनका नाम जगाई, मधाई था, इस विरोधी दल के प्रधान थे। यह दोनों ऐसे दुष्ट थे, जिनको देख कर विश्वास नहीं होता था कि इनको ईश्वर ने रचा है। मनुष्य की कल्पना में ऐसा कोई पाप-कार्य्य नहीं आसकता, जिसको उन दोनों ने न किया हो। वे नवद्वीप के कोतवाल थे, किन्तु शान्तिस्थापन के स्थान में पर-पीड़न ही उनका कार्य्य था। उनका जैसा पापी उस समय दूसरा नहीं था। ब्राह्मण-वंश में जन्म-ग्रहण कर, वे पाप की शेष सीमा में पहुँच चुके थे।

श्रीगौराङ्ग देव ने अपने सहयोगियों में से हरिदास, (जो एक मुसलमान के घर में जन्म से पले थे) तथा श्रीनित्यानन्द को यह आज्ञा दी थी कि वे स्थान स्थान में जाकर लोगों को श्रीकृष्ण भक्त बना कर उनको सदाचारी बनावें। एक दिन जब श्रीनित्यानन्द और हरिदास धर्म्मप्रचार कर रहे थे, उसी समय जगाई और मधाई ने उन पर आक्रमण किया। मधाई ने श्रीनित्यानन्द के सिर में बड़े ज़ोर से एक घड़े के टुकड़े को मारा, जिससे उनके सिर से रक्त वेग से निकलने लगा। श्रीनित्यानन्द ने उस दारुण प्रहार की

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

कुछ भी चिन्ता न कर, मधाई को गले से लगाने का उद्योग किया। उस समय मदोन्मत्त मधाई उनको फिर मारने के लिए बढ़ा। उसी समय जगाई ने उसको रोक लिया। श्रीगौराङ्ग को जब यह ज्ञात हुआ, तो वे उसी समय वहाँ आये। उन्होंने आकर देखा कि नित्यानन्द के शिर से रक्त बह रहा है, और वे जगाई मधाई को बड़े प्रेम से धर्म्मोपदेश कर रहे हैं। श्रीगौराङ्ग ने भय दिखाने के लिए कुछ क्रोध किया, उसी समय श्रीनित्यानन्द ने उनसे कहा—"मुझको कुछ भी दुःख नहीं है, आप स्थिर हों। आप इनको क्षमा करें, इन दोनों जीवों को मुझको माँगे दें।" जब नित्यानन्द बड़े अनुरोध से जगाई मधाई को क्षमा करने के लिए श्रीगौराङ्ग से कह रहे थे, उसी समय उन दोनों को ज्ञान हुआ, और वे रोते हुए श्रीगौराङ्ग और श्रीनित्यानन्द के चरणों पर गिरे। दोनों ने उनको गले से लगाया। जगाई मधाई, दोनों ने श्रीगौरांग से प्रार्थना की—"प्रभो! हम बड़े पातकी हैं, हम अपने उद्धार के लिए प्रार्थना नहीं करते। न आपसे क्षमा चाहते हैं; क्योंकि हमने ऐसा कोई कार्य्य नहीं किया है, जिससे आप प्रसन्न हों। हमको आप दण्ड दीजिए, हम सहर्ष उसे ग्रहण करेंगे।" यह कह कर वे रुदन करने लगे। श्रीगौराङ्ग ने उनको सान्त्वना देकर श्रीहरिनाम को जपने का आदेश किया। उस दिन से वे राक्षस-तुल्य दोनों भाई श्रीकृष्ण के बड़े भक्त हो गये, और उनके द्वारा जो नवद्वीप में ही नहीं, किन्तु चारों ओर अशान्ति फैली हुई थी, वह दूर हुई। जगाई, मधाई, प्रातःस्मरणीय हो गये। जिनके नाम सुनते ही लोग काँपने

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

लगते थे, जो डाकुओं के सर्दार थे, वे परम पवित्र होकर दिन व्यतीत करने लगे। श्रीगौराङ्ग उनको गंगातट पर ले गये, और बोले "तुमने जो कुछ पाप किये हैं, वह मुझको सङ्कल्प कर दो। तुम भगवान् का भजन करो, तुम पर श्रीकृष्ण प्रसन्न होकर तुमको अपना दास बनावेंगे।"

जगाई मधाई जैसे धनशाली, दुर्दान्त और प्रबलप्रतापान्वित व्यक्तियों के दुष्टस्वभाव के परिवर्तन हो जाने से नदिया के दो चार मनुष्यों को श्रीगौराङ्ग देव से कुढ़न पैदा हो गई। उन्होंने वहाँ के "चाँद ख़ाँ" नामक काज़ी को बहकाया। काज़ी ने भी आज्ञा दी कि नदिया में कहीं भी उच्च स्वर से सङ्कीर्तन न हो। सङ्कीर्तन-द्वेषियों को इससे बहुत आनन्द हुआ, वे भक्तों को तरह तरह से डराने लगे। वे कहने लगे कि नवद्वीप में एक भी भक्त न रहने पावेगा, श्रीगौराङ्ग को बादशाह की सेना पकड़ कर ले जायगी। श्रीगौराङ्ग देव को जब यह ज्ञात हुआ, तब वे हँसने लगे। काज़ी के कई सिपाहियों ने आकर संकीर्त्तन न करने के लिए, भक्तों को उसकी आज्ञा सुनाई। किन्तु प्रभु के प्रवीण भक्तों पर उसका कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ा। श्रीगौराङ्ग ने आज्ञा दी कि काज़ी की आज्ञा के विरुद्ध आज हम सब नवद्वीप में "नगर-सङ्कीर्त्तन" निकालें; काज़ी क्या करता है, यह भी जान लिया जाय। बिल्कुल भय मत करो, आज संध्या को सब भक्त एकत्रित होकर यहाँ से ही कीर्तन निकालेंगे।" धीरे धीरे भक्तगण आने लगे। एक दो नहीं, सैकड़ों भक्त आकर एकत्रित हुए। यथासमय सङ्कीर्त्तन निकला। सङ्कीर्त्तन नगर में होता

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

हुआ काज़ी के दरवाज़े पर पहुँचा। काज़ी डर से छिप गया था, उसकी सेना, जिसको कीर्त्तन रोकने के लिए भेजा था, वह भी कीर्त्तन में मिल कर श्रीहरिनामोच्चारण कर रही थी। काज़ी कोई उपाय न देख कर, श्रीगौराङ्ग के चरणों पर आकर गिरा। श्रीगौराङ्ग ने उसको सम्मान कर बैठाया। उससे कहा—"मैं तो तुम्हारा अभ्यागत होकर आया, और तुम छिप गये, यह कैसा धर्म्म है?" काज़ी ने डरते हुए कहा—"मैं बड़ा ही दुष्ट हूँ, जो मैंने संकीर्त्तन को रोका। अब न मैं ही सङ्कीर्त्तन को कभी रोकूँगा, और न मेरा कोई वंशीय ही ऐसा कार्य्य करेगा।" यह कह कर वह अपने अपराध को प्रभु से बार बार क्षमा कराने लगा। प्रभु ने उसे आश्वासन दिया। काज़ी भी नगर-सङ्कीर्त्तन में दूर तक श्रीहरि नाम लेता हुआ आया। श्रीगौराङ्ग ने उसे बिदा किया। उस दिन से काज़ी श्रीकृष्ण का भक्त होगया।

इस घटना के बाद ही, श्रीगौराङ्ग का बाह्यज्ञान क्रमशः कम होने लगा। कभी वे भगवत्प्रेम में मूर्छित हो जाते थे, कभी "श्रीकृष्ण" कहते हुए उनकी आँखों से आँसुओं की धारा बहने लगती थी। जब वे श्रीकृष्णनाम लेते थे उस समय उनको बिलकुल ज्ञान नहीं रहता था। सदा पागलों जैसी दशा रहती थी। दिन रात "श्रीकृष्ण, प्रिय कृष्ण" कहते हुए और रुदन करने में व्यतीत होता था।

श्रीगौराङ्ग अब घर में रहना नहीं चाहते थे। उन्होंने संन्यास-ग्रहण करने का दृढ़ सङ्कल्प कर लिया। भक्तों को इससे बड़ा दुःख

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

हुआ, किन्तु श्रीगौराङ्ग ने एक दिन गभीर निशा में अपनी माता, और स्त्री को छोड़ कर दारुण शीत में गंगा को तैर कर पार किया, और कटुवा में आकर "केशव" नामक एक परमभक्त संन्यासी से संन्यास ग्रहण किया। संन्यास लेकर श्रीगौराङ्ग प्रेमावेश में इधर उधर घूमने लगे। जो मिलता था उसको वे भगवद्भक्त बनाते थे। श्रीगौरांग को प्रेम में मार्ग का कुछ भी ज्ञान नहीं रहता था, वे न जाने किधर जाना चाहते थे और किधर चले जाते थे। प्रेमावेश में वे एक स्थान में ही बहुत दिनों तक घूमते रहे, वहाँ से आगे बढ़ने पर भी मार्गज्ञान न होने के कारण लौट फिर कर, पुनः वहाँ ही आ जाते थे। मुख से केवल "हा कृष्ण ! हा कृष्ण !" शब्द निकलते थे; नेत्रों से आँसुओं की धारा बहती थी। कभी रोते हुए मूर्छित हो जाते थे, कभी धूल में लोटने लगते थे। श्रीगौरांगदेव वृन्दावन जाने के लिए बारह दिन तक पश्चिम की ओर चलते रहे, किन्तु प्रेमावेश में फिर घूम फिर कर पूर्व की ओर जाने लगे। घूमते फिरते, वे शान्तिपुर में आ पहुँचे; जहाँ अद्वैताचार्य्य का घर था। प्रभु को वहाँ जाकर कुछ ज्ञान हुआ। जब नवद्वीप के निवासियों को ज्ञात हुआ कि प्रभु शान्तिपुर में पहुँच गये हैं, तब सब वहाँ आकर प्रभु से मिलने लगे। प्रभु के विरह में उनकी बड़ी बुरी दशा हो रही थी। प्रभु अपने भक्तों से मिल कर प्रसन्न हुए। "हरिबोल" "हरिबोल" करते हुए नृत्य करने लगे। उस समय, जब तक प्रभु वहाँ रहे, शान्तिपुर में हरिनाम के अतिरिक्त और कुछ भी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

नहीं सुना जाता था। श्रीगौराङ्ग वहाँ सबसे बिदा लेकर पुरी जाने के लिए प्रस्थित हुए।

श्रीजगन्नाथ के दर्शन करने के लिए प्रभु बड़े उत्कण्ठित हो रहे थे। उनको जब श्रीजगन्नाथ के मन्दिर की ध्वजा दिखाई दी, उसको देखते ही प्रभु मूर्छित होगये। ज्ञान होने पर, प्रभु बड़े वेग से मन्दिर की ओर दौड़े, उनके मुख से "प्राणनाथ!" शब्द निकल रहा था; आँखों से आँसुओं की धारा बह रही थी। स्थान स्थान में, उनके चरण पत्थरों पर ठुकराते थे, स्थान स्थान में गिरते थे, किन्तु श्रीगौराङ्ग ईश्वर-प्रेम में भागे हुए जा रहे थे। श्रीगौराङ्ग पुरी पहुँच कर, श्रीजगन्नाथ के मन्दिर में पहुँचे, उस समय उनकी जो दशा थी, वह वर्णन करना कठिन है। श्रीजगन्नाथ को देखते ही श्रीगौराङ्ग एक साथ दौड़े, और उन्होंने चाहा कि श्रीमूर्त्ति को गोद में लेलें। उसी समय प्रेम में उनको मूर्छा हुई। मूर्छित होकर मन्दिर में गिर पड़े। दैवयोग से उस समय, पण्डित-कुल गौरव-रवि वासुदेव सार्वभौम उपस्थित थे, वे पुरी के राजा प्रतापरुद्र की सभा के प्रधान पण्डित थे। वे नवीन संन्यासी के अपूर्व प्रेमविकाश और अलौकिक भावावेश को देख कर श्रीगौरांग को अपने घर लिवा लेगये। श्रीगौराङ्ग की मूर्छा तब तक दूर नहीं हुई थी। श्रीगौराङ्ग के साथ श्रीनित्यानन्द आदि कई भक्त आये थे, वे उच्च स्वर से श्रीहरिनाम गान करने लगे। तीसरे पहर श्रीगौराङ्ग होश में आये। एक साथ "हरि" "हरि" कह कर वे नृत्य करने लगे। सार्वभौमजी, श्रीगौराङ्ग के प्रेमादि को देख कर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

बड़े मुग्ध थे, किन्तु न्याय और वेदान्त में वे इतने फँसे हुए थे कि प्रेमभक्ति या विश्वास के बल से प्रेममय भगवान् मिल सकते हैं, यह बात उनको पहेली जैसी ज्ञात होती थी।

यद्यपि श्रीगौराङ्ग के दर्शन से, और उनके मधुर संसर्ग से सार्वभौम के हृदय में एक महा आलोडन उपस्थित हो गया था, किन्तु वे पार्थिव माया के इतने वशीभूत थे कि गर्व, दम्भ यह सब पण्डितशिरोमणि होने पर भी उनमें विद्यमान थे। उन्होंने श्रीगौराङ्ग से कहा—"सुनो चैतन्य! (श्रीगौराङ्ग का संन्यास लेने के समय श्रीकृष्णचैतन्य नाम हुआ था) तुमने बुद्धिमान् होकर इस नवीन वयस में संन्यास लिया, यह तुमने अच्छा नहीं किया"। श्रीगौराङ्ग ने उनसे कहा—"मैंने जो संन्यास लिया है, वह अपने अभिमान दूर होने के लिए। जब मुझे श्रीकृष्ण का विरह असह्य ज्ञात हुआ, तब घर में रहना मुझे अच्छा नहीं लगा। मैं आपका शिष्यानुशिष्य हूँ, ज्ञानहीन बालक हूँ, आपके शरणापन्न हूँ। मुझे शिक्षा दीजिए, और मेरे संन्यास धर्म्म की कैसे रक्षा हो, यही उपदेश कीजिए।" सार्वभौम ने कहा—"तुम वेदान्त श्रवण करो।" श्रीगौरांग ने कहा—"जैसी आपकी आज्ञा हो, मैं वही करूँगा।" सार्वभौम ने श्रीगौरांग को सात दिन तक वेदान्त सुनाया, किन्तु उन्होंने उसके विषय में सार्वभौम से कुछ नहीं कहा। अन्त में जब सार्वभौम ने उनसे इसका कारण पूछा, तब श्रीगौराङ्ग ने उनको उत्तर दिया, कि "मैं व्यास के सूत्रों का अर्थ अच्छी तरह समझ रहा हूँ, किन्तु आप उसकी जो व्याख्या करते

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

हैं, वह मुख्यार्थ को छोड़ कर गौणार्थ की करते हैं। उसको मैं कुछ नहीं समझता।" इसी बात पर सार्वभौम और श्रीगौराङ्ग का बहुत विवाद हुआ, अन्त में श्रीगौराङ्ग ने उनसे कहा—"आप विद्या के पारदर्शी हैं, इससे प्रेममय भगवान् को प्राप्त करना दुर्लभ है। उनको जानने के लिए एक-मात्र विश्वास और भक्ति की आवश्यकता है।" इस तरह सार्वभौम को श्रीगौराङ्ग ने भक्ति का अच्छी तरह उपदेश किया। सार्वभौम श्रीगौराङ्ग के शरणागत हुए। उस दिन से वे श्रीगौरांग के एक बड़े भक्त हो गये।

इस प्रकार श्रीगौराङ्गदेव पुरी में दो मास तक रहे। वहाँ से उन्होंने दक्षिण जाने की इच्छा की। श्रीगौराङ्ग वहाँ से मत्त सिंह की तरह, प्रेम में विलीन होकर नीचे लिखे श्लोकों को कहते हुए जाने लगे—

कृष्ण! कृष्ण! कृष्ण! कृष्ण! कृष्ण! कृष्ण! कृष्ण! हे कृष्ण! कृष्ण! कृष्ण! कृष्ण! कृष्ण! कृष्ण! कृष्ण! हे कृष्ण! कृष्ण! कृष्ण! कृष्ण! कृष्ण! कृष्ण! रक्ष मां! कृष्ण! कृष्ण! कृष्ण! कृष्ण! कृष्ण! कृष्ण! पाहि माम्।

रामराघव! रामराघव! रामराघव! रक्ष माम्।
रामराघव! रामराघव! रामराघव! पाहि माम्।
कृष्णकेशव! कृष्णकेशव। कृष्णकेशव! रक्ष माम्।
कृष्णकेशव! कृष्णकेशव! कृष्णकेशव! पाहि माम्।

श्रीगौराङ्ग कभी नाम-गान करते थे, कभी नृत्य करते थे, और सामने जो मिलता था, उसको धर्म्मोपदेश करते थे। किसी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

को आलिङ्गन करते थे, किसी को "हरिनाम" दान करते थे। जिस जिस ग्राम में, श्रीगौराङ्ग गये, उसी स्थान को उन्होंने भगवद्भक्त बना दिया। जब वे कूर्म्म तीर्थ पर उतरे, तब वासुदेव नामक एक कुष्ठी (कोढ़ी) ब्राह्मण आकर श्रीगौरांग के शरणागत हुआ। श्रीगौरांग ने उसे प्रेम से आलिंगन किया और भक्ति का उपदेश दिया।

इसी प्रकार, पतित, अधम, दुर्ज्जन, कङ्गाल, सबको भगवद्भक्त बनाते हुए नृसिंहक्षेत्र पहुँचे। वहाँ से चल कर एक दिन श्रीगौरांग बैठे हुए श्रीकृष्ण गान कर रहे थे, उसी समय राजमन्त्री रामानन्द आकर उनके शरणागत हुए। श्रीगौरांग का कई दिनों तक उनसे शास्त्रालाप श्रीकृष्णकथाविचार हुआ। रामानन्द, श्रीगौरांग के बड़े भक्त हो गये। वहाँ से मल्लिकार्जुनी तीर्थ, अहोवल, सिद्धवट, स्कन्धक्षेत्र, त्रिमट, वृद्धकाशी, त्रिपदमल्ल वेङ्कटार, त्रिपदी, शिवकाञ्ची, विष्णुकाञ्ची त्रिमल्ल प्रभृति स्थानों में होकर श्रीरंगक्षेत्र में पहुँचे। जहाँ जहाँ श्रीगौरांग गये, वहाँ वहाँ उन्होंने पापियों को भगवद्भक्त बनाया, प्रेमदान किया। मार्ग में शैव, बौद्ध, मुसल्मान, पठान आदि अनेक धर्म्म माननेवालों को श्रीकृष्णभक्त बना कर, श्रीगौरांग फिर पुरी आये, उन दिनों उड़ीसा के महाराज प्रतापरुद्र थे। सार्वभौम से, श्रीगौराङ्ग की महिमा सुन कर उनके दर्शन करने की उन्हें इच्छा हुई। सार्वभौम द्वारा जब अपनी इच्छा को उन्होंने श्रीगौरांगदेव पर प्रकट किया, तब उन्होंने यह अस्वीकार किया। श्रीगौरांगदेव ने कहा—"मैं संन्यासी हूँ,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

राजदर्शन करना मेरे लिए विष-भक्षण से भी असाधु है।" इधर प्रतापरुद्र की और भी उत्कण्ठा बढ़ने लगी, किन्तु श्रीगौरांग ने बार बार इसको अस्वीकार किया। अन्त में सार्वभौम ने प्रतापरुद्र से यह कहा कि जिस समय श्रीगौरांग प्रेमावेश में हों, उस समय आप उनके दर्शन करें। एक दिन श्रीगौरांग, प्रेम से मूर्छित पड़े हुए थे, इतने में ही दीनवेश से प्रतापरुद्र आकर उनके चरणों को दाबने लगे। प्रतापरुद्र ने एक श्रीमद्भागवत का श्लोक पढ़ा, उसी समय प्रभु को ज्ञान हुआ। श्रीगौरांग उठ बैठे और उठ कर प्रतापरुद्र को आलिंगन किया, और बोले "तुमने इस असमय में आकर, प्रेमपूर्ण श्लोक सुना कर मुझको बड़ा आनन्दित किया है।" श्रीगौरांग इसके उपरान्त भक्तिचर्चा करने लगे। प्रतापरुद्र ने अपना परिचय नहीं दिया।

श्रीगौराङ्ग के अनेक भक्त थे। श्रीगौराङ्ग ने उनमें से श्रीअद्वैताचार्य्य को यह आज्ञा दी कि वे चाण्डालों तक को श्रीकृष्ण-प्रेमी बनावें, श्रीनित्यानन्द को भी यह आज्ञा दी।

एक संन्यासी श्रीगौराङ्ग के भक्त थे, जिनका नाम "हरिदास" था। उन्होंने एक दिन, एक स्त्री से भिक्षा ग्रहण की, इस अपराध पर श्रीगौराङ्ग ने उनको त्याग कर दिया। प्रति-रथयात्रा पर, समस्त वङ्गदेश और उड़ीसा के श्रीगौराङ्ग-भक्त पुरी आते थे। श्रीगौराङ्ग उनको धर्मोपदेश देते थे। श्रीगौराङ्ग प्रभु, वङ्गदेश की यात्रा के लिए पुरी से रवाना होकर यात्रा करते हुए रामकेलिग्राम में उपस्थित हुए। वहाँ उन दिनों वङ्गाल के सूबेदार सैयद हुसेन-

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

शाह रहते थे । श्रीगौराङ्ग जब वहाँ पहुँचे, तब उनके साथ की भीड़ को देख कर, हुसेनशाह और उनके सेनापति को बड़ा भय हुआ, किन्तु जब उनको ज्ञात हुआ कि एक संन्यासी के दर्शन करने के लिए इतनी भीड़ है, तब वह अपने मन्त्री से बोले—"मैं बङ्गाल का बादशाह हूँ, यदि मैं स्वयं यत्न करूँ तो भी दो चार लाख मनुष्य एकत्रित नहीं हो सकते । इस संन्यासी को देख कर आश्चर्य होता है, जिसके पीछे पोछे इतने मनुष्य अपने घर द्वार को छोड़ कर लगे हुए हैं । इससे यह मुझको मनुष्य ज्ञात नहीं होता ।"

हुसेनशाह के दो मन्त्री थे, जिनका नाम रूप और सनातन था । वे राजकार्य्य में बड़े दक्ष थे । हुसेनशाह के होते हुए भी ये दोनों भाई ही राज्य करते थे । दोनों भाइयों के आचरण सब मुसलमानों जैसे हो गये थे । जब उनको ज्ञात हुआ कि श्रीगौराङ्ग यहीं आये हैं, तब दोनों भाई रात में आकर प्रभु के शरणापन्न हुए । श्रीगौरांग ने उन्हें आलिङ्गन किया, और धर्मोपदेश किया । श्रीगौरांग के मिलन का उन पर ऐसा प्रभाव पड़ा कि थोड़े दिन में ही उन्होंने अपना पद छोड़ दिया । हुसेनशाह इससे बहुत क्रुद्ध हुआ, किन्तु दोनों भाइयों ने इसकी कुछ चिन्ता न की । श्रीगौरांग ने रूप-सनातन से काशी और प्रयाग में मिलने के लिए कहा । श्रीगौरांग फिर पुरी आये ।

एक दिन रात्रि के शेष में श्रीगौरांग ने केवल एक भक्त को

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

साथ लेकर वृन्दावन के लिए प्रस्थान किया । प्रभु वृन्दावन जायँगे, यह सब भक्तों को ज्ञात नहीं था । जब प्रातःकाल हुआ तब प्रभु को न देख कर उनको बड़ा आश्चर्य्य हुआ । किन्तु पीछे उनको एक भक्त से ज्ञात हुआ । इधर श्रीगौरांग विजन वन में चले जा रहे थे, क्योंकि उनको भय था कि सीधे मार्ग पर चलने से उनके साथ बहुत भीड़ हो जायगी और वे वहाँ न पहुँच सकेंगे । जो झाड़खण्ड वर्तमान समय में भी बड़ा भयङ्कर और दुर्गम है, श्रीगौरांग उसी पथ से जा रहे थे । चारों ओर हिंसक पशु डोलते थे । किन्तु वे किसी ओर ध्यान न देते हुए, श्रीनाम-सङ्कीर्त्तन करते हुए जा रहे थे । कुछ दिनों में श्रीगौरांग काशी आये । वहाँ उन दिनों प्रकाशानन्द नाम के एक संन्यासी, अपने अनेक शिष्यों को लेकर रहते थे । वे बड़े पण्डित थे । उन्होंने श्रीगौरांग के विरुद्ध काशी में बहुत बातें प्रचारित कीं, किन्तु वे उस पर कुछ ध्यान न देकर, प्रयाग होते हुए वृन्दावन आये । मार्ग में जो मिलता था, उसको भगवद्भक्ति का उपदेश देते थे । जिस श्रीवृन्दावन के नाम-मात्र को सुनने से प्रभु, प्रेम में विह्वल होकर मूर्च्छित हो जाते थे, बहुत दिनों से जिस वृन्दावन के लिए श्रीगौराङ्ग पागल हो रहे थे उस वृन्दावन को देख कर उनकी कैसी दशा हुई होगी, यह लिखना कठिन है ।

श्रीगौराङ्ग वहीं से प्रयाग आये । मार्ग में उन्होंने कई मुसल-मानों को श्रीकृष्ण-भक्त बना कर, उनमें से एक का नाम "रामदास" रक्खा । प्रयाग में उन्हें श्रीरूप मिले । एक दिन प्रयाग में श्रीगौरांग

1027.
CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

नौका पर चढ़ कर जाते थे । उस समय उनको प्रेमावेश हो आया। नौका पर, "श्रीकृष्ण !" "श्रीकृष्ण !" कहते हुए नृत्य करने लगे, और श्रीयमुना में कूद पड़े । बड़े कष्ट से उनको कई मनुष्यों ने निकाला । इसी प्रकार एक बार श्रीगौराङ्ग एक कुए में "श्रीकृष्ण" कहते हुए कूद पड़े थे ।

प्रयाग से फिर काशी आये, उस समय वहाँ मायावादी संन्यासियों का राज्य जैसा था । हज़ारों संन्यासी वहाँ रहते थे । श्रीगौरांग वहाँ फिर आये हैं, इसको सुन कर संन्यासियों में बड़ी हलचल मची, वे फिर प्रभु की निन्दा करने लगे । वहाँ पर "सनातन" आकर उनसे मिले । एक दिन संन्यासियों को एक ब्राह्मण ने भोज दिया, सब संन्यासियों के साथ में श्रीगौरांग को भी निमन्त्रण दिया गया । सब संन्यासी आचुके थे, उसी समय श्रीगौरांग वहाँ उपस्थित हुए । श्रीगौरांग उस स्थान पर जाकर बैठ गये, जहाँ पर सब संन्यासियों ने अपने पैर धोये थे। श्रीगौराङ्ग का तेज और व्यवहार देख कर संन्यासियों को बड़ा आश्चर्य्य हुआ । प्रकाशानन्द भी वहीं थे, उन्होंने श्रीगौराङ्ग को बुला कर अपने पास बैठाया । बात ही बात में ज्ञान विषय पर दोनों का शास्त्रालाप होने लगा, श्रीगौराङ्ग ने उनके सब कुतर्कों का खण्डन कर भक्ति का उपदेश दिया। प्रकाशानन्द, श्रीगौराङ्ग के चरणों पर गिर पड़े; श्रीगौराङ्ग ने उन्हें गले से लगाया । प्रकाशानन्द का नाम "प्रबोधानन्द" हुआ । उन्हीं प्रबोधानन्द का श्लोक है—

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

"पापीयानपि नीचजातिरपि दुःशीलोऽपि दुष्कर्म्मणां
सीमाऽपि श्वपचाधमोऽपि नितरां दुर्वासनाढ्योऽपि च ।
दुर्द्देशप्रभवोऽपि तत्र विहितावासोऽपि दुस्सङ्गतो,
नष्टोऽप्युद्धृत एव येन कृपया तं गौरमेत्र स्तुमः" ॥

अर्थात् हम उन श्रीगौराङ्ग की स्तुति करते हैं, जिनकी कृपा से पापी, नीच जाति, दुष्टशील, दुष्कर्म्मा श्वपचों से भी अधम, बुरे देशों में उत्पन्न हुए मनुष्य, और दुस्सङ्गी मनुष्य भी श्रीकृष्णभक्त हो जाते हैं। श्रीगौराङ्ग को उन्हीं दिनों काशी में "सुबुद्धिराय" मिले। सुबुद्धि राय वङ्गाल के एक बड़े आदमी थे, और मुसलमानों ने उनको जूठा जलपान कराकर भ्रष्ट कर दिया था। इसके लिए उनका अब क्या प्रायश्चित्त होना चाहिए, यह पूछने के लिए वे वङ्गाल से काशी आये थे। काशी के पंडितों ने उनसे कहा कि उनका प्रायश्चित्त यही है कि वे गरम घी को पीकर मर जायँ।" सुबुद्धिराय ने श्रीगौराङ्ग से भी इसके विषय में सम्मति ली, उन्होंने कहा कि "तुम्हारा प्रायश्चित्त यही है कि तुम श्रीवृन्दावन में जाकर श्रीकृष्ण का भजन करो।" सुबुद्धिराय ने यही किया। श्रीगौराङ्ग ने सनातन को वृन्दावनवास करने के लिए कहा। श्रीगौराङ्ग वहाँ से पुरी आये। क्रमशः जितने दिन जाने लगे, श्रीगौरांग का कृष्णविरह में प्रेम-वैकल्य भी बढ़ने लगा। वे रात दिन श्रीकृष्ण-प्रेम में मग्न रहने लगे। वे रात दिन बेहोश रहते थे। "श्रीकृष्ण" "श्रीकृष्ण" कहना ही उनका कार्य्य रह गया था। बीच बीच में कभी कभी होश आजाता था। कभी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

श्रीगौराङ्ग "श्रीकृष्ण" "श्रीकृष्ण" कहते हुए भागने लगते थे, कभी मूर्च्छित हो जाते थे। श्रीगौराङ्ग का प्रेम-वैकल्य बढ़ने लगा। प्रेमोन्माद और भी बढ़ा। एक दिन समुद्र को यमुना समझ कर, उसमें कूद पड़े, और बड़ी कठिनता से निकले। इसी प्रकार श्रीगौराङ्ग कृष्ण-प्रेम में विलीन होकर कभी श्रीकृष्ण-संकीर्त्तन करते थे, कभी मूर्च्छित होते थे, आँखों से आँसुओं की धारायें बहाते थे। श्रीगौराङ्ग की यह अवस्था कई वर्षों तक रही।

श्रीगौराङ्ग उस समय ही नहीं, किन्तु उससे बहुत पहले से ही "ईश्वरावतार" माने जा चुके थे। जिन लोगों ने श्रीगौराङ्ग के दर्शन किये थे, वे सब उनको ईश्वरावतार मानते थे। भारतवर्ष में उस समय जो सर्वोत्तम विद्वान्, प्रकाशानन्द और सार्वभौम थे, वे भी यह बात स्वीकार कर चुके थे। श्रीगौरांग ने समय समय पर अनेक ईश्वरीय लीलायें की थीं, किसी के मृतपुत्र को जीवनदान किया था, कभी षड्भुजायें धारण की थीं, कभी किसी को स्पर्श कर ही भगवद्भक्त बना दिया था। उनकी अद्‌भुत लीलाओं को देख कर, उनको लाखों मनुष्य ईश्वरावतार स्वीकार कर चुके थे। उनका रूप रङ्ग मनुष्यों के जैसा नहीं था। उनके चरित, उनका प्रेम मनुष्यों जैसा नहीं था। ईश्वरावतार में जो जो बातें होनी चाहिए, उनमें सब थीं।

एक दिन श्रीगौराङ्ग (१४५५ शकाब्द में) पुरी में श्रीजगन्नाथ-मूर्त्ति में भक्तों के देखते देखते लीन हो गये।

SPS
294.5 G 32 SH

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE